B.A.I, Ist Paper
Philosophy (Hons)
Date-08.03.2021

जैनदर्शन का स्याद्वाद।
(The Jain Theory of Syadvada)

जैनदर्शन के मतानुसार प्रत्येक वस्तु के अनन्त गुण होते हैं। मनुष्य एक समय वस्तु के एक ही गुण का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। वस्तु के अनन्त गुणों का ज्ञान मुक्त व्यक्ति के द्वारा ही संभव है। साधारण मनुष्यों का ज्ञान आंशिक एवं अपूर्ण होता है। वस्तु का इस आंशिक ज्ञान को "नय" कहा जाता है। नय किसी वस्तु को समझने के विभिन्न दृष्टिकोण हैं। यह सत्य का आंशिक रूप है। इससे सापेक्ष सत्य की प्राप्ति होती है, निरपेक्ष सत्य की नहीं। इस प्रकार स्याद्वाद ज्ञान की सापेक्षता का सिद्धान्त है।

विश्व के किसी भी वस्तु के संबंध में हमारा जो निर्णय होता है, वह सभी दृष्टियों से सत्य नहीं होता। उसकी सत्यता विशेष परिस्थिति एवं विशेष दृष्टि से ही सत्य मानी जा सकती है। मनुष्यों के बीच मतभेद रहने का कारण यह है कि वह स्वयं के विचारों को नितांत मानते हैं तथा दूसरे के विचारों की उपेक्षा करते हैं। इसे समझाने के लिए जैन विचारक हाथी तथा छः अन्धों का दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। छः अन्धे हाथी के आकार का ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से हाथी के अंगों को स्पर्श करते हैं। जो अन्धा व्यक्ति हाथी के शरीर के जिस अंग का स्पर्श करता है, वह उसी भाग को पूरा हाथी समझने की भूल कर बैठता है। जो अन्धा व्यक्ति हाथी के पूंछ को पकड़ता है, वह हाथी को रस्से जैसा समझता है। जो हाथी के सूढ़ को स्पर्श करता है वह हाथी को अजगर जैसा समझता है। जो हाथी के पैर का स्पर्श करता है, वह हाथी को स्तंभ जैसा समझता है। जो हाथी के पेट को छूता है, वह हाथी को दीवार जैसा समझता है। जो हाथी के मस्तक का स्पर्श करता है वह हाथी को छाती जैसा समझता है तथा जो हाथी के कान का स्पर्श करता है वह हाथी को पंखे जैसा समझता है। प्रत्येक अंधा स्वयं के ज्ञान को सत्य तथा शेष व्यक्ति के ज्ञान को असत्य समझने की भूल कर बैठता है। यहाँ सभी अंधों का ज्ञान अपूर्ण एवं गलत, इस कारण है कि सभी ने हाथी

को मात्र एक-एक अंग का स्पर्श किया है।

विभिन्न दर्शनों में जो मतभिन्नता पायी जाती है, इसका भी यही कारण है। प्रत्येक दर्शन स्वयं के दृष्टिकोण को सही एवं दूसरे के दृष्टिकोण को गलत तथा मिथ्या बतलाकर इसकी उपेक्षा करता है। यदि प्रत्येक दर्शन यह विचार करता कि उसका मत किसी दृष्टि-विशेष पर निर्भर है तो दार्शनिक विचारों में मतभेद होने की संभावना नहीं होती। जैनों द्वारा दिया गया निर्णय भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से सही है। इसी प्रकार विभिन्न दार्शनिक विचार भी अपने-अपने मत से युक्तिसंगत हो सकते हैं।

इसी कारण जैन दर्शन में प्रत्येक "नय" के आरम्भ में "स्यात्" शब्द जोड़ देने का निर्देश दिया गया है। उदाहरणार्थ यदि हम देखते हैं कि टेबुल लाल है, तो हमें कहना चाहिए कि "स्यात् टेबुल लाल है।" टेबुल को मात्र लाल कहने पर अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ उपस्थित हो सकती हैं। यदि अंधों द्वारा हाथी के स्वरूप की व्याख्या करते समय, "स्यात्" शब्द का प्रयोग किया जाता तो, अर्थात् वे यह कहते कि स्यात् हाथी खम्भे के समान है, तो इसका मत दोषरहित माना जाता तथा उक्त स्थिति में सभी अंधों की बात अपने-अपने दृष्टि से सत्य होती तथा पूर्ण दृष्टि से अयथार्थ होती। इसी को "स्याद्वाद" कहा जाता है। इस प्रकार स्याद्वाद वह सिद्धान्त है जो मनुष्य द्वारा प्राप्त ज्ञान को एकांगी तथा आंशिक सत्य मानता है।

इस आधार पर जैन दर्शन में सात प्रकार के परामर्श (Judgement) माने गये हैं। जबकि तर्कशास्त्र में दो प्रकार के परामर्श स्वीकार किये गये हैं- भावात्मक तथा अभावात्मक अर्थात् निषेधात्मक। तर्कशास्त्र के अनुसार भावात्मक वाक्य का उदाहरण है "क" "ख" है तथा निषेधात्मक वाक्य का उदाहरण है "क" "ख" नहीं है। किन्तु जैन इन दोनों उदाहरणों में कुछ संशोधन करते हुए "स्यात्" शब्द जोड़ देते हैं। इन दोनों वाक्यों

का अर्थ इस प्रकार है "स्यात है" और "है" है, स्यात "है" और "है" नहीं है। अतः इस प्रकार के परामर्श को मानता है और दर्शन के इस वर्गीकरण को "सप्त भंगी नय" कहा जाता है। इस सप्त भंगी नय की चर्चा निम्नवत् है:-

(01) स्यात् अस्ति (Some how S is) यह प्रथम परामर्श है। उदाहरण, स्वरूप कहा जाए कि "स्यात् दीवाल लाल है" तो इसका पद यह अर्थ होगा कि किसी विशेष देश, काल तथा प्रसंग में दीवाल लाल है। यह वाक्य भावात्मक है।

(02) स्यात् नास्ति (Some how S is not) यह अभावात्मक (निषेधात्मक) वाक्य है। "स्यात् स्कूल इस कोठरी के अन्दर नहीं है" इसका यह अर्थ नहीं होता कि कोठरी के अन्दर कोई भी स्कूल है ही नहीं। स्यात् से यह बोध होता है कि विशेष काल में, विशेष रूप-रंग का स्कूल कोठरी में नहीं है। स्यात् शब्द से स्थान, काल तथा रंग का बोध होता है।

(03) स्यात् अस्ति च नास्ति च (Some how S is and Also is not) एक अन्य दृष्टिकोण से वस्तु की सत्ता हो भी सकती है तथा नहीं भी हो सकती है। घड़े के उदाहरण में घड़ा लाल हो भी सकता है तथा नहीं भी हो सकता है। इस स्थिति में "स्यात है तथा स्यात नहीं है" का प्रयोग ही हो सकता है।

(04) स्यात् अवक्तव्यम् (Some how S is Indescribable) - यदि किसी विचार में परामर्श में परस्पर विरोधी गुणों के संबंध में एक साथ विचार करता हो तो इस स्थिति में स्यात् अवक्तव्यम् का प्रयोग होता है। लाल स्कूल के संबंध में कभी ऐसा भी हो सकता है कि इसके संबंध में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि स्कूल लाल है या काला। इस स्थिति में स्कूल के रंग की व्याख्या के लिए स्यात् अवक्तव्यम् का प्रयोग आवश्यक एवं उचित है।

(05) स्यात् अस्ति च अवक्तव्यम् च (Some how S is

and is also indescribable) — प्रथम और चतुर्थ नयों को यौगिक रूप से मिलाने पर पाँचवा नय बनता है। इसके अनुसार किसी वस्तु का अस्तित्व है भी तथा उस वस्तु का स्वरूप अनिर्वचनीय है। उदाहरण स्वरूप "स्यात् मनुष्य है और अवक्तव्य है।" यहाँ कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य का अस्तित्व है, किन्तु उसके स्वरूप के विषय में सामान्य रूप से (सभी कालों, सभी स्थानों एवं सभी प्रसंगों) कुछ नहीं कहा जा सकता है। यदि मनुष्य के आकार के बारे में पूछा जाय तो कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है।

(06) स्यात् नास्ति च अवक्तव्यम् च (Somehow S is not and is indescribable) — इसके अनुसार द्वितीय तथा चौथे परामर्श को मिला देने से छठे परामर्श की प्राप्ति होती है। उदाहरण स्वरूप स्यात् घोड़ा नहीं है और अवक्तव्य भी है अर्थात् घोड़ा अभी नहीं है, किन्तु इसके सदैव का अनुपस्थिति के विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

(07) स्यात् अस्ति च, नास्ति च, अवक्तव्यम् च (Somehow S is and is not and is indescribable) — द्वितीय तथा चतुर्थ नयों को मिलाकर सातवाँ नय बनता है। उदाहरण स्वरूप - स्यात् घोड़ा है, नहीं है, और अवक्तव्य भी है। जैसे स्यात् मनुष्य ईमानदार है, ईमानदार नहीं है तथा उसका चरित्र अनिर्वचनीय (indescribable है)।

संक्षेप में सप्त-भंगी नय को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है —

(01) स्यात् है (स्यात् अस्ति)।
(02) स्यात् नहीं है (स्यात् नास्ति)।
(03) स्यात् है तथा नहीं भी है (स्यात् अस्ति च नास्ति च)।
(04) स्यात् अव्यक्तव्य है (स्यात् अवक्तव्यम्)।
(05) स्यात् है तथा अव्यक्तव्य भी है (स्यात् अस्ति च अवक्तव्यम् च)
(06) स्यात् नहीं है तथा अव्यक्तव्य भी है (स्यात् नास्ति च अवक्तव्यम् च)।
(07) स्यात् है, नहीं है तथा अव्यक्तव्य भी है (स्यात् अस्ति च नास्ति च अवक्तव्यम् च)।

जैन दर्शन को सात वाक्यों पर सिकता न्याय —

संगत है। अस्ति, नास्ति तथा अवक्तव्य पर एक साथ विचार करने पर सात ही भंग हो सकते हैं। इस स्थिति में स्यात् शब्द को न तो सात से कम माना जा सकता है और न तो अधिक।

स्याद्वाद के सिद्धान्त को संदेहवाद नहीं कहा जा सकता है। संदेहवाद ज्ञान की संभावना में संदेह करता है किन्तु स्याद्वाद यथार्थ ज्ञान को संभव मानता है। वह तो केवल यही कहता है कि साधारण व्यक्तियों का ज्ञान आंशिक दृष्टिकोण से ही सत्य हो सकता है। कोई भी ज्ञान सभी दृष्टिकोणों से सत्य नहीं कहा जा सकता। अतएव स्याद्वाद को संदेहवाद कहना सर्वथा अनुपयुक्त है। जैनों का स्याद्वाद ज्ञान की सापेक्षता का सिद्धान्त है। जैनों का स्याद्वाद स्थान, काल तथा दृष्टिकोणों पर निर्भर करता है। इसी कारण यह सापेक्षवाद है।

स्याद्वाद की आलोचना—

(01) वेदान्त दर्शन में स्याद्वाद की आलोचना करते हुए कहा गया है कि कोई भी सिद्धान्त सिर्फ संभावना पर स्थापित नहीं हो सकता है। यदि सभी वस्तुएं संभव मात्र हैं तो स्याद्वाद स्वयं संभवमात्र हो जाता है।

(02) स्याद्वाद के अनुसार सभी ज्ञान सापेक्ष तथा आंशिक हैं। जैन मात्र सापेक्ष को मानते हैं निरपेक्ष को नहीं किन्तु सभी सापेक्ष निरपेक्ष पर आधारित हैं।

(03) स्याद्वाद के प्रथम चार नय ही मौलिक हैं तथा अंतिम तीन नय उन्हीं की पुनरावृत्ति मात्र हैं।

(04) बौद्धों तथा वेदान्तियों ने स्याद्वाद को विरोधात्मक सिद्धान्त कहा है। उनके अनुसार एक ही वस्तु एक समय में 'है' तथा 'नहीं है', नहीं हो सकती। शंकराचार्य ने स्याद्वाद को पागलों का प्रलाप कहा है।

(05) यदि जैनदर्शन के स्याद्वाद के कथन को सत्य मान लिया जाए कि नयों में आंशिक सत्यता है न कि पूर्ण सत्यता तो जैनों का ज्ञानशास्त्र, आचारशास्त्र तथा तत्त्वमीमांसा भी आंशिक रूप से ही सत्य हो जाते हैं।

डॉ० सन्तोष कुमार सिंह
विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र
अनजोर सिंह महाविद्यालय,